International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 3, March - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

''छत्तीसगढ़ में लघुवनोपज संग्रहण एवम् सरगुजा जिले के वनोपज संग्राहक श्रमिकों का ऐतिहासिक वि"लेषण''

डॉ. घन"याम दुबे
सहायक प्राध्यापक (इतिहास विभाग)
गुरू घासीदास(केन्द्रीय)वि"वविद्यालय
बिलासपुर (छ.ग.)

एवम
अभिषेक अग्रवाल
शोध छात्र (इतिहास विभाग)
गुरू घासीदास(केन्द्रीय)वि"वविद्यालय
बिलासपुर (छ.ग.)

सारां"ा

धान का कटोरा नाम से प्रसिद्ध छत्तीसगढ राज्य एक आदिवासी बहुल क्षेत्र है। जहाँ की लगभग आधी से भी अधिक आबादी ग्रामीण क्षेत्र में निवास करती है। छत्तीसगढ़ राज्य का सरगुजा जिला वन सम्पदा बहुल क्षेत्र हैं, यहाँ विभिन्न प्रकार के लघु वनोपज प्राप्त होते हैं।

सरगुजा जिले की अर्थव्यवस्था वन तथा वनोपज पर आश्रित है। तेन्दूपत्ता सरगुजा का महत्वपूर्ण लघु वनोत्पाद है, जिसका उपयोग बीड़ी बनाने में किया जाता है। तेंदूपत्ता के कारोबार में सरगुजा के 80 प्रति"ात से अधिक ग्रामीण आदिवासी कार्यरत हैं। वन सम्पदा के अंतर्गत सरगुजा के आदिवासियो के शोषण का इतिहास सदियो पुराना है। छत्तीसगढ़ के दूरस्थ जंगलो मे रहने वाले आदिवासियों का जंगलो से प्राप्त नैसर्गिक संपदा के लिए स्वत़ंत्रता से पूर्व, अंग्रजों द्वारा तथा राष्ट्रीयकरण से पूर्व व्यापारियो, ठेकेदारों एवं बिचौलियों द्वारा शोषण विभिन्न प्रकार से किया जाता था। वनोपज संग्राहक श्रमिकों का के श्रम का इस व्यापार में कोई मूल्य नही था।

तेंदूपत्ता संग्राहकों के शोषण, वनोपज की अत्यधिक बढ़ती हुई मांग तथा उसकी व्यापारिक उपयोगिता को देखते हुए प्रदे"ा सरकार द्वारा तेन्दूपत्ता का राष्ट्रीयकरण **28 नवंबर 1964** को 'मध्यप्रदे"ा तेन्दूपत्ता विनियमन अधिनियम' के तहत किया गया, इसके साथ–साथ (1969 एवं 1970) अन्य वनोत्पादों का राष्ट्रीयकरण किया गया, किन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति तथा वनोपज राष्ट्रीयकरण के बाद भी तेंदूपत्ता श्रमिकों का शोषण किसी न किसी रूप में जारी है।

मूल शब्द– वन, वनोपज, ठेकेदार, बिचौलिये, शोषण, राष्ट्रीयकरण ।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 3, March - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

''छत्तीसगढ़ में लघुवनोपज संग्रहण एवम् सरगुजा जिले के वनोपज संग्राहक श्रमिकों का ऐतिहासिक वि"लेषण''

वन सम्पदा किसी भी राष्ट्र की मूल सम्पत्ति होती है। जो राष्ट्र जितनी ही अधिक वन सम्पदा से सम्पन्न होता है, वह उतना ही अधिक सम्पन्न शील राष्ट्र होने का अधिकारी होता है। छत्तीसगढ़ अंचल वन सम्पदा के वैभव से सम्पन्न प्रदे"ा है, किन्तु वन सम्पदा से इतना सम्पन्न होते हुए भी इस क्षेत्र को भौतिक प्रगति से वंचित रहना या पिछड़े हुए हालत में बने रहना, यहाँ के वनोपज संग्राहकों के लिये एक दुःख का ही विषय रहा।

छत्तीसगढ़ में आदिवासियों की आजीविका में लघु वनोपजों जैसें तेन्दूपत्ता, सालबीज, हर्रा, महुआ, गोंद, चिरौंजी का महत्वपूर्ण स्थान है। वनों से लगे हुए इस क्षेत्र में आदिवासी, हरिजन एवं पिछड़े वर्ग के लोग विभिन्न वनोपजों का सीधे उपयोग कराने के अतिरिक्त उनका संग्रहण कर निवर्तन से प्राप्त आय से अपनी अन्य जरूरी आव"यकताओं की पूर्ति भी करते हैं। ''छत्तीसगढ़ के बस्तर जिले में एक सर्वेक्षण के अनुसार एक औसत आदिवासी परिवार जिसकी कुल वार्षिक आय 1750 रूपये थी, उसमें से 1500 रूपये की आय केवल छोटी वनोपजों की शामिल थी।''[1] इस आय को प्राप्त करने में न कोई जोखिम न कोई पूंजीगत विनियोग करना पड़ा था। इससे छोटी वनोपजों का आदिवासी अर्थव्यवस्था में महत्व ही स्पष्ट होता है। परन्तु आदिवासी क्षेत्रों में आदिवासियों का ही सम्पन्न वर्गों द्वारा शोषण किया जाता रहा है, जों कि किसी भी योजना की सफलता के लिए मूलभूत समस्या रही है।

''आदिवासी अर्थव्यवस्था अनादिकाल से लघु वनोपज पर आश्रित रही है। वन प्रबन्ध के पहले दौर में आदिवासियों का लघु वनोपज पर कहीं निजी उपयोग के लिए और कहीं विक्रय के लिए भी उनके अधिकार को स्वीकार किया गया था।''[2] किन्तु फिर भी जंगल से प्राप्त इस नैसर्गिक वनोपज के संग्राहक श्रमिकों का शोषण विभिन्न चरणों में शोषण जारी रहा।

''कृषि के अतिरिक्त जनजातियों का आर्थिक आधार वनों से प्राप्त सामग्री है। आदिवासी वनों से इन सामग्रियों को एकत्रित करते है और साप्ताहिक बाजार में इनके बदले आव"यकता की वस्तुये खरीदते हैं। अधिकतर आदिवासी तौल एवं वास्तविक मूल्य से अनभिज्ञ होने के कारण बहुत सस्ते में अपनी वस्तुऐं दे देते हैं। व्यापारी इनकी अनभिज्ञता का लाभ उठाते हैं। अतः जल्दी ही ये ऋण के बोझ से दब जाते हैं। परिणामतः अनेक बार इन्हें पर्याप्त भोजन भी प्राप्त नहीं होता ।

ऋणग्रस्तता आदिवासियों की अर्थव्यवस्था का अभिन्न अंग बन गया है। बस्तर के अतिरिक्त सभी जनजातियो में ऋणग्रस्तता गम्भीर समस्या है। परिणामतः ये लोग बंधक मजदूर हो जाते हैं। जिससे

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 3, March - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

ऋणदाता इनका शोषण करता रहता है। हाट में आने वाले व्यापारी भी इन्हें ऋण के बन्धन में बांध लेते है। जिससे भी इन्हें सरलता से मुक्ति नहीं मिलती।''[3]

भारत का हृदय प्रदे"ा छत्तीसगढ़ वनों की हरीतिमा से अच्छादित है। इस भूभाग के 41 प्रति"ात क्षेत्र में वन हैं। ''स्वतंत्रता प्राप्ति के प"चात भारत सरकार ने वनोपज पर आधारित उद्योगों की स्थापना की दि"ाा में कदम उठाए। वन संरक्षण की नीति अपनाकर सरकार द्वारा वनो ंका राष्ट्रीयकरण किया गया, वनोपज के क्रय–विक्रय, लकड़ी काटने इत्यादि पर प्रतिबन्ध लगा दिए गए। वनों के राष्ट्रीयकरण के प"चात वनोपज का संग्रहण शासन द्वारा नियुक्त अभिकर्ता ही कर सकता है। वनोपज के व्यापार बिचौलियों की समाप्ति, उत्पादक को उत्पादन का उचित मूल्य दिलवाना तथा शासन की आय में वृद्धि करना आदि दृष्टि से वनों का राष्ट्रीयकरण किया गया था।''[4]

सरगुजा जिले में वनोपज संग्रहण–

सरगुजा क्षेत्र छत्तीसगढ़ राज्य के उत्तर क्षेत्र में स्थित वन सम्पदा बहुल क्षेत्र है। वनों की बहुलता के कारण सरगुजा क्षेत्र को छत्तीसगढ़ की **''उत्तरी हरित पेटी''** कहा जाता है। ''यह क्षेत्र प्रारम्भ से ही वन सम्पदा से परिपूर्ण रहा है। विभिन्न जनजातियों के आश्रय स्थल तथा उनकी आजीविका के रूप में वनों की भूमिका महत्वपूर्ण है। ये जनजातियाँ वनों में आखेट के अतिरिक्त अनेक प्रकार के वन उत्पादनों से अपनी आजीविका का अर्जन करती है। वनोपज के रूप मे साल, सागौन, बांस, लाख, महुआ, शहद, और खैर, हर्रा, बहेड़ा, आंवला, प्रमुख थे। जनजातियाँ का जीवन सामान्यतः वनों पर पूरी तरह से आश्रित हैं।''[5]

तेन्दूपत्ता सरगुजा जिले का बहुत बड़ा व्यवसाय एवं उद्योग है किन्तु इसका लाभ तेन्दूपत्ता संग्राहकों को नहीं मिल पाता था, जिसका मुख्य कारण बिचौलियों द्वारा मामूली दरों पर कच्चा माल प्राप्त करना एवं उससे अच्छा लाभ कमाना था।

एक द"ाक पूर्व, वन को आय का एक प्रमुख साधन माना जाता था, जिसके परिणामस्वरूप जंगलों की अंधाधुंध कटाई की जाती थी। लधुवनोपज के विपणन के संम्बन्ध में राज्य शासन ठेकेदारों पर निर्भर होते थे। जिसका परिणाम यह हुआ कि आदिवासियों द्वारा एकत्रित की जाने वाली वनोपज जैसे तिखुर, मूसली, हर्रा, गोंद, चिरौंजी, तेन्दूपत्ता, साल बीज आदि के व्यापार में बिचौलिये और व्यापारी मालामाल होते चले गए। जबकि आदिवासियों को न्यूनतम मजदूरी भी नहीं दी जाती थी।

प्रचूर वन सम्पदा तथा खनिज सम्पदा से समृद्ध सरगुजा राज्य के लघु वनोपज संग्राहकों का जीवन स्तर बहुत ही निम्न रहा है। आर्थिक स्तर निम्न रहने का कारण ि"ाक्षा का अभाव, नये उपायों एवं

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 3, March - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

सिद्धान्तों को समझने की जिज्ञासा एवं दे"ा के विभिन्न भागों से दूर करना आदि है। यहाँ के निवासी अपनी सहजता और सरल स्वभाव के कारण समीपस्थ राज्यों के अधिक विकसित एवं व्यावसायिक वृद्धि मे कु"ाल लोगों के शोषण का ि"ाकार भी रहे। परिणामस्वरूप सरगुजा राज्य नैसर्गिक रूप में परिपूर्ण होने के बावजूद भी विकास की मुख्य धारा से नहीं जुड़ पाया।

सरगुजा क्षेत्र के लघुवनोपज संग्राहक श्रमिकों का वनोपज राष्ट्रीयकरण के पूर्व शोषण–

सरगुजा जिले के आदिवासियों के शोषण का इतिहास सदियों पुराना है। सरगुजा जिले में वनोपजों के संग्रहण एवं विपणन में आदिवासियों, हरिजनों एवं अन्य कमजोर वर्ग के लोगों का शोषण ब्रिटि"ा काल से होता रहा है। स्वतंत्रता प"चात स्थानीय व्यापारियों, महाजनों एवं कोचियों द्वारा भी इनके शोषण का एक लम्बा इतिहास है। वनोपज राष्ट्रीयकरण से पूर्व वनोपज संग्राहक श्रमिकों का शोषण संभवतः उनकी नियति बन गई थी। इतने अधिक शोषण के बावजूद भी यहाँ के वनोपज संग्राहक व्यापारियों, महाजनों, ठेकेदारों पर पूर्ण वि"वास करते थे तथा धन की आव"यकता होने पर इस वर्ग पर ही निर्भर रहते थे, इससे उनका शोषण का चक्र चलता रहता था।

अि"ाक्षा और शहरी सभ्यता से दूर नहीं जंगलों में निवास करने वाले आदिवासियों का आर्थिक शोषण कोई नई बात नहीं थी। वनों से प्राप्त नैसर्गिक नैसर्गिक संपदा के लिए व्यापारी, ठेकेदारों और बिचौलियों द्वारा भारी शोषण किया जाता था।

सरगुजा जिले का बहुत बड़ा एवं महत्वपूर्ण लघु वनोत्पाद तेन्दूपत्ता है। बीड़ी को जिस आवरण से लपेटकर प्रस्तुत किया जाता है, वह तेन्दूपत्ता ही है। छत्तीसगढ़ प्रदे"ा में जैसे–जैसे बीड़ी व्यवसाय फैला, जंगलों से तेनदूपत्ता खरीदने का काम भी प्रारम्भ हुआ। तेन्दूपत्ता की मांग बहुत बढ़ गई और इसके साथ ही बढ़ते तेन्दूपत्ते की तुड़वाई का कार्य।

''राज्य में जैसे–जैसे बीड़ी का व्यवसाय फलने–फूलने लगा जंगलों से तेन्दूपत्ते का महत्व और बढ़ने लगा। राज्य से बाहर इसके निर्यात में भारी वृद्धि होने लगी। तेन्दूपत्ता व्यापारियों ने राज्य में एक ऐसी व्यवस्था कायम की कि नाममात्र की मजदूरी देकर आदिवासियों से तेन्दूपत्ता तुड़वाया जाने लगा। अि"ाक्षित और निरीह आदिवासी जो 20 तक गिनती नहीं जानता, इस व्यवसाय में ठगे जाते रहे और शोषण कुचक्र चलते रहे।''[6]

सरगुजा क्षेत्र के प्रमुख लघु वनोत्पाद तेन्दूपत्ता संग्राहक श्रमिकों के शोषण का एक लम्बा काल रहा है। सरगुजा क्षेत्र में तेन्दूपत्ता संग्राहक श्रमिकों का रियासत काल एवं उसके बाद भी अत्यधिक शोषण होता रहा, वनोपज व्यापार मे उनकी भूमिका मात्र संग्राहक की ही रह गई। तेन्दूपत्ता व्यापार में

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 3, March - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

वन ठेकेदारों का ऐसा जाल बिछा हुआ था कि तेन्दूपत्ता संग्राहक श्रमिकों का प्रत्येक चरण में शोषण होता रहा था।

सरगुजा क्षेत्र में वनोपज संग्राहक श्रमिको के शोषण का एक पूरा चक्र बना होता था, जिसमें वनोपज श्रमिक फंसा होता था। तेन्दूपत्ता के व्यापार में ''व्यापारी फसल आने से पहले ही जंगलों में अपना जाल बिछा लेते हैं। उनके एजेंट गांव–गांव में फैल जाते हैं। फड़ों के माध्यम से आदिवासियों को कुछ एडवांस रकम देकर उन्हें एक प्रकार का बंधुआ बना लेते हैं ताकि वे समय पर ठेकेदार अथवा व्यापारी का काम करें। आदिवासियों की इस परम्परा एवं ईमानदारी का व्यापारी भरपूर फायदा उठाते हैं। जब तक तेन्दूपत्ते का काम चलता है, ठेकेदार या व्यापारी यह सुनि"चत करते हैं कि अग्रिम की कुछ रा"ाि आदिवासी मजदूर के ऊपर बकाया रहे। आदिवासियों को काम में लगानें के लिये उन्हीं के बीच का मुखिया, पटेल या अन्य प्रभाव"ाली व्यक्तियों का उपयोग होता है। उन्हीं के माध्यम से लाखों आदिवासियों पर बिना किसी निरीक्षण के व्यापारी अपना पूर्ण नियन्त्रण रखते हैं।

तेन्दूपत्ता संग्राहक श्रमिकों का वनोपज व्यापार में तेन्दूपत्ता ठेकेदारों, फड़दारों द्वारा भिन्न–भिन्न प्रकार से शोषण किया जाता था। फड़दार पत्तियों की संख्या, गुणवत्ता, आदि के आधार पर श्रमिकों के साथ बेईमानी करते थे। वनोपज श्रमिकों को इस व्यापार में अपने श्रम का उचित मूल्य प्राप्त नहीं होता था।

''जब सीजन में पत्ते की तुड़ाई होती है तो आदिवासी पत्तों की गड्डीयाँ बनाकर लाते हैं। गड्डी में एक सौ पचास पत्ता होना चाहिए, ऐसी 1000 गड्डीयों को एक मानक बोरा के बराबर माना जाता है। पाँच पत्ता कम या अधिक होने को महत्व नहीं दिया जाता। परन्तु आदिवासी गिनती ही नहीं जानते। आदिवासी अपने मोटे अंदाज से ही गड्डीयाँ बनाते जाते हैं। अक्सर गड्डीयों में पत्ते अधिक ही होते हैं। आदिवासी श्रमिक सूर्योदय के पूर्व से तथा दोपहर तक जंगलों से पत्ते तोड़ते हैं तथा दोपहर के बाद पत्तों की गड्डीयाँ बनाते हैं। गड्डी पतली हुई तो फड़मुं"ाी वापस भी कर सकता है। फड़मुं"ाी पत्तों की गड्डीयाँ लेते सेमय बहुत हेराफेरी करता है। पत्तों मे ंखामियाँ निकाली जाती हैं, जैसे पत्ता दागदार है, आकार में छोटा है, निकाल दी जाती है और आदिवासी श्रमिकों को उनकी तुड़ाई का भुगतान नहीं मिलता, परन्तु ऐसे सभी पत्तों की गड्डीयाँ ठेकेदार स्वयं रख लेता है और उसे बाजार में बेच देता है।''[7]

गड्डियाँ लेते समय **''पचोर व्यवस्था''** चलती थी अर्थात् सौ पत्तों की एक गड्डी होती थी और ऐसी ही गड्डियों पर पाँच गड्डी ऊपर से मुफ्त में देना होता था। यह सामान्य परम्परा बन गई थी। परन्तु ठेकेदारों से फड़दार इन अतिरिक्त गड्डियों का पैसा भी मिलता था। वर्तमान में भी यह व्यवस्था

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 3, March - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

किसी न किसी रूप में जारी है।

इसके अलावा गड्डियों की गिनती में भी वनोपज संग्राहकों को ठगा जाता था। सौ गड्डी हो तो फड़दार सत्तर, अस्सी या पचास कुछ भी गिन सकता है। अनपढ़ आदिवासी कुछ नहीं समझता, वह तो सिर्फ यह देखता है कि उसे उसकी जरूरत लायक पैसा मिलता है या नहीं। श्रम का मूल्य यहाँ नहीं होता। शोषण का यह हाल है कि दिन भर एक आदिवासी सपरिवार तुड़ाई के कार्य में लगा रहता है और इसके बाद घण्टों बैठा रहता है। फड़दार के पास गड्डियाँ जमा करवाने हेतु मुंह अंधेरे काम शुरू होता है और सूरज ढलने पर आदिवासी घर जाता है। जंगलों में आदिवासी के लिए ओव्हरटाईम की व्यवस्था तो अकल्पनीय होती थी।

सरगुजा क्षेत्र के वनोपज श्रमिकों का फड़दार द्वारा उनके वेतन भुगतान में भी उनसे बेईमानी की जाती थी तथा उनका शोषण किया जाता था। ठेकेदार उनके अ"ाक्षित होने का लाभ उठाकर उन्हें कम मजदूरी देता था। तेन्दूपत्ता श्रमिक शासन की न्यूनतम वेतन जानकारी के अभाव, अ"ाक्षा एवं गैर जागरूकता के कारण इस व्यापार में ठगा जाता था तथा उसका जीवन स्तर निम्न बना हुआ था।

''आदिवासियों को दैनिक वेतन के आधार पर रखा जाता है। पर भुगतान साप्ताहिक होता है। अतः जब सप्ताह के अन्त मे ंगड्डियों का टोटल लगाया जाता है तो आदिवासी फिर बेवकूफ बनता है। पुनः गिनती में हेराफरी की जाती है। तेन्दूपत्ते के व्यापार में ठेकेदारों को ऐसा जाल बिछा होता है कि आदिवासी कदम–कदम पर ठगा जाता है। पत्तो का ग्रेडे"ान करना हो, पत्तों का सुखाना हो या बारों में भरना, नाम मात्र का पैसा देकर मुफ्त के भाव यह सब काम करवा लिया जाता है। इस कुचक्र में कई कर्मचारी भी शामिल हो जाते हैं तथा उनका आर्थिक शोषण होता ही है। परन्तु प्रायः यह देखने में आता है कि ठेकेदार या उनके आदमी आदिवासी लड़कियों का यौन शोषण तक करते हैं।''[8]

इन कुचक्रों पर वार करने के लिए शोषण के तरीकों का पूरा अध्ययन जरूरी है और फिर उससे बचने ंके व्यवहारिक तरीके इजाद करने की जरूरत है।

''लघु वनोपज के व्यापार से बिचौलिए निजी व्यापारियों की समाप्ति और वनोपज के संगंहण में लगे आदिवासी, हरिजन, मजदूरों को संरक्षण देने के लिए मध्यप्रदे"ा के पूर्ववर्ती अनुसूचित जाति एवम् जनजाति आयोग से बिचौलियों तथा मध्यस्थों द्वारा आदिवासी मजदूरों के शोषण के बारे में पहली बार आपत्ति करते हुए लिखा।''[9]

लघु वनोपजों के संग्राहक आदिवासियों को शोषण से बचाने हेतु सहकारी प्रयास–

छत्तीसगढ़ (तत्कालीन म.प्र.) में 1964 के पूर्व तेंदूपत्ता के व्यापार पर वन विभाग का नियंत्रण नगण्य

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 3, March - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

प्राय था। व्यापारी बहुत ही कम कीमत पर एक बड़े क्षेत्र का ठेका प्राप्त कर लेता था एवम् श्रमिकों को मनमाने ठंग से मजदूरी देकर तेन्दूपत्ता संग्रहित कराता था। अतः तेन्दूपत्ता के इस व्यापार में आदिवासी एवं पिछड़े वर्ग के लोगों को शोषण से मुक्त कराने के लिए ''28 नवंबर 1964 में 'मध्यप्रदे"ा तेंदूपत्ता अधिनियम'लागू करके राज्य शासन ने तेंदूपत्ते के व्यापार पर एकाधिकार स्थापित किया।''[10]

''इसके बाद 21 जून 1969 को संपूर्ण मध्यप्रदे"ा में लघु वनोपज गोद के व्यापार पर एकाधिकार प्राप्त किया गया। 21 जून 1969 को हर्रे का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया।''[11]

इस अधिनियम द्वारा श्रमिको कां उचित दर पर पारिश्रमिक तथा उत्पाद को उचित मूल्य दिलाने के लिए उचित प्रावधान किया गया। इस कार्यवाही से राज्य शासन के राजस्व में भी आ"ाातीत वृद्धि होती रही है। उक्त अधिनियम के मुख्य उद्दे"य निन्नानुसार रहे है–

''(अ) राज्य के सहकारी वनों में अधिक मूल्यवान एवं वि"ाल मात्रा में वन उपज उत्पन्न की जाती है, जिसके व्यापार के विनियमन (Regulate) करने के लिए कोई प्रावधान नहीं है जिससे व्यापार का मुनाफा ठेकेदारों या बिचौलियों (मध्यस्थों) द्वारा शोषण कर लिया जाता है। राज्य के ऐसे आगम (Proceeds) के लिए विधिपूर्ण विनियोग द्वारा राज्य के संसाधनों में वृद्धि करने हेतु वन उपज के व्यापार को विनियमित करने के लिए अधिनियम की आव"यकता है।

(ब) ऐसे व्यक्ति जिनकी रोजी–रोटी का खास साधन वनउपज का संग्रह है, जिनमें आदिवासी जनजाति तथा पिछड़े वर्ग के लोग हैं, उन्हें उनकी संग्रहित वन उपज का यथार्थ मूल्य उपलब्ध नहीं हो पाता है। इसलिए भी वन उपज के व्यापार का विनियमन एवं राज्य का एकाधिकार होना अवा"यक है।''[12]

''उक्त अधिनियम की सफलता से प्रभावित होकर वन उपज व्यापार विनियमन अधिनियम 1969 लागू किया गया, क्योकि राज्य के आदिवासी तथा पिछड़े हुए लोगों को जिनकी जीविका का मुख्य साधन वनोपज संग्रहण ही है। ठेकेदारों तथा मध्यस्थ व्यक्तियों से आदिवासियों को पर्याप्त प्रतिलाभ नहीं मिल पाता था एवं अधिलाभ का अधिकां"ा भाग ठेकेदारों तथा अन्य मध्यस्थ व्यक्तियों द्वारा हड़प लिया जाता था। इस अधिनियम के पारित हो जाने से तेन्दूपत्ता के साथ गोंद, हर्रा और सालबीज का भी एकाधिकार शासन के पास आ गया।''[13]

तेन्दूपत्ता सरगुजा क्षेत्र का महत्वपूर्ण लघु वनोत्पाद है, जिसका उपयोग राज्य में बीड़ी बनाने में किया जाता है। प्रारंभ में ब्रिटि"ा काल में रियासतों द्वारा एवं स्वतंत्रता बाद तेंदूपत्ता श्रमिकों का वनोपज ठेकेदारो, बिचौलियों एवं व्यापारियों द्वारा व्यापक शोषण किया जाता था, यद्यपि शासन द्वारा लघु वनोत्पादों के राष्ट्रीयकरण एवं उसके प"चात विभिन्न नीतियों के निर्माण से लघु वनोत्पाद श्रमिकों के

शोषण में कुछ कमी आयी है, किंतु अभी भी उनका शोषण किसी ना किसी रूप में जारी है।

अधिक मांग एवं उपयोगिता को देखते हुए सरकार द्वारा वनोपज का राष्ट्रीयकरण किया गया था, किन्तु इसके बाद भी तेंदूपत्ता संग्रहण ठेकेदार तेंदूपत्ता सेग्रहण में सक्रिय रहे तथा तेंदूपत्ता संग्रहण में ठेकेदारी व्यवस्था चलती रही और ठेकेदार तेंदूपत्तों की बोली लगाते रहे तथा आदिवासियों का शोषण जारी रहा। इस व्यवस्था का दुष्परिणाम यह हुआ कि मुनाफा सरकार के पास जाने के जगह ठेकेदारों के पास जाने लगा। राष्ट्रीयकरण के बाद ठेकेदारों की बजाय विभागीय संस्थायें ही आदिवासियों का शोषण करने लगीं और ज्यादा मुनाफा सरकार के पास जाने लगा तथा सरकार उसका लाभ जनता तक नहीं पंहुचा पाई। अतः आदिवासियो के शोषण का कुचक्र जारी रहा। इन कुचक्रों पर वार करने के लिए शोषण के तरीकों का पूरा अध्ययन जरूरी है और उनसे बचने के व्यवहारिक तरीके इजाद करने की आव"यकता है।

संदर्भ ग्रन्थ–

1. इण्डियन जनरल ऑफ माइनर फारेस्ट प्रोड्यूस, इन्स्टीट्यूट ऑफ डेसीडियस फॉरेस्ट, जबलपुर, मध्यप्रदे"ा, वाल्यूम 1, नंबर 1–2, जनवरी–जून 1991, पृष्ठ संख्या 11–12.
2. शर्मा डॉ. ब्रह्मदेव, 'आदिवासी विकास एक सैद्धान्तिक विवेचन', मध्यप्रदे"ा हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, द्वितीय संस्करण, 1982, पृष्ठ संख्या 91–92.
3. कुमार प्रमिला, ''मध्यप्रदे"ा एक भौगोलिक अध्ययन'' मध्यप्रदे"ा हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2000, पृष्ठ संख्या 142–143.
4. शुक्ला डॉ. सुरे"ा चन्द्र एवं शुक्ला डॉ. अर्चना, 'छत्तीसगढ़ का समग्र इतिहास', ि"ाक्षादूत ग्रंथागार प्रका"ान, रायपुर, 2018, पृष्ठ संख्या 277–278
5. त्रिपाठी डॉ. मंजू, 'छत्तीसगढ़ की राजतंत्रीय व्यवस्थाः सरगुजा समूह की रियासतें', वसुन्धरा प्रका"ान, गोरखपुर, 1999, पृष्ठ संख्या 153.
6. नायडू, पी.आर., ''भारत के आदिवासी विकास की समस्यायें'', राधा पब्लिके"ान्स, नई दिल्ली, 2002, पृष्ठ संख्या 156.
7. वही, पृष्ठ संख्या 157.
8. वही, पृष्ठ संख्या 157.

9. रिपोर्ट ऑफ द कमि"नर फॉर एस टी, एस सी फिफ्त एण्ड सिक्सथ रिपोर्ट, 1955/1983–84, पृष्ठ संख्या 170 एवम् 50.
10. मध्यप्रदे"ा तेन्दूपत्ता (व्यापार विनियमन) अधिनियम, 1964 (वर्ष 1964 का 29) (म.प्र. शासन वन विभाग की अधिसूचना क्र. 14334–X-64 दि. 28 नवम्बर 1964, राजपत्र असाधारण म.प्र. दि. 28 नवम्बर 1964, पृ. 3368.
11. मध्यप्रदे"ा वन उपज (व्यापार विनियमन) अधिनियम, 1969, क्रमांक 9/1969, (म.प्र. राजपत्र असाधारण दि. 02 अगस्त 1969, पृ. 1943–1953, अधिसूचना क्र. 21438, दि. 01 अगस्त 1969, भोपाल.
12. मध्यप्रदे"ा वन उपज (व्यापार विनियमन) अधिनियम, 1969, अध्यादे"ा क्रमांक 9/1969 पृष्ठ संख्या 363.
13. सेन, डी.पी. एवम् सेन वरूणा, मध्यप्रदे"ा फॉरेस्ट मेन्यूअल, दिलायर्स होम्स, इन्दौर, वर्ष 1993, पृष्ठ 162.